IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कमलजीत चौधरी की कविताओं में स्त्री विमर्श

बलवान सिंह

कार्यालय : राजकीय महविद्यालय आर.एस.पुरा. जम्मू

आवास : रत्नूचक, जम्मू

प्रखर कल्पना शक्ति के धनी और आकर्षक बिंब गढ़ने में सिद्धहस्त, वर्तमान हिंदी कविता के समर्थ हस्ताक्षर कमल जीत चौधरी की कविता अपना मुहावरा स्वयं रचती है। उनकी कविता का फलक अत्यंत व्यापक है। किसान, मजदूर, खेत–खलिहान, पेड़, वन, तालाब, नदी, मछली, वर्तमान शिक्षा प्रणाली, दिल्ली–लेह से न्यूपार्क और कोपेनहेगन अपनी पूरी धज के साथ उपस्थित हैं। तमाम समकालीन विषयों को कविता में स्थान देते हुए भी कमल जीत ने स्त्री को अपनी कविता में सर्वाधिक महत्व दिया है। स्त्री की आकांक्षा, अस्मिता और पहचान के लिए उसके संघर्ष को अपनी कविताओं में प्रमुखता से स्थान दिया है।

'औरत' नामक शीर्षक कविता में स्त्री के संघर्ष का बखूबी वर्णन किया गया है। कवि ने स्त्री को एक डायरी बताया है जिसमें प्रत्येक पुरुष अंकित होना चाहता है जिसका अभिप्राय है कि पुरुष स्त्री को भोगना चाहता है। कवि का मानना है कि स्त्री को समझने के लिए प्रकृति की अवधारणा को समझना अनिवार्य है। प्रकृति के विभिन्न उपादानों को समझे बिना स्त्री को समझना असंभव है। कवि स्त्री के त्याग और बलिदान की तुलना कलम के साथ करता है। कलम अपने अस्तित्व को मिटाकर वर्ण, वाक्य और भाषा तथा अंकों का निर्माण करती है। स्त्री भी स्वयं को गलाकर संतति का निर्माण करती है–

''औरत
एक डायरी होती है
इसमें हर कोई दर्ज़ होना चाहता है
एक किताब होती है
इसे पूरा पढ़ने के लिए

नदी से पेड़ तक की यात्रा करनी पड़ती है

बच्चे की कलम होती है

छील छील लिखती है

क ख ग

ए बी सी

1 2 3 ''[1]

अपने को मिटा देने पर भी स्त्री के गुणों को सदैव उसकी दुर्बलता समझा गया। स्त्री शोषण के लिए नई–नई रुढ़ियों की खोज की जाती रही है। उसको पराधीन बनाए रखने हेतु उसके जीवन को कठिन से कठिनतर बनाया जाता रहा है। भारतीय समाज में व्याप्त रुढ़िवादी परंपराएँ स्त्रियों को पराधीन बनाए रखने का आयोजन मात्र दिखाई पड़ती हैं। सामाजिक ताने–बाने के लिए जरूरी और ग़ैर–जरूरी परंपराओं के निर्वहन का उत्तरदायित्व स्त्री पर लाद दिया जाता है। पुंसवन संस्कार, यज्ञोपवीत, मुण्डन, शादी–ब्याह, व्रत इत्यादि तमाम अवसरों पर किए जाने वाले क्रिया कलापों में स्त्री को बेहद चतुराई से उलझा कर रखा जाता है, जिससे उसे अपने अस्तित्व का बोध ही नहीं हो पाता। 'औरत' कविता के माध्यम से कवि स्त्री जीवन को नारकीय बनाने की मानसिकता का पर्दाफाश करते हुए कहते हैं–

''औरत के रास्ते को कोई खींचकर

लम्बा कर देता है

सीधे सादे रास्ते का

सिर पकड़

उसे तीखे मोड़ देता है।''[2]

इसी से मिलते–जुलते भावों का चित्रण जयशंकर प्रसाद अपने प्रसिद्ध नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में कर चुके हैं। प्रसाद जी भी स्त्रियों की दुर्दशा को पुरुषों का स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखने की विकृत मानसिकता की देन मानते हैं–

'स्त्रियों के इस बलिदान का भी कोई मूल्य नहीं है। कितनी असहाय दशा है। अपने निर्बल और अवलम्बन खोजने वाले हाथों से यह पुरुषों के चरणों को पकड़ती हैं और वह सदैव

ही इनको तिरस्कार, घृणा और दुर्दशा की भिक्षा से उपकृत करता है। तब भी यह बावली मानती हैं?''[3]डॉ. बी.सुधा स्त्री की दयनीय स्थिति के कारणों की पड़ताल करते हुए कहती हैं कि जन्म से ही पुत्रियों को अपमान और अवमानना का दंश झेलने को विवश होना पड़ता है। स्त्रियों को मात्र घर–परिवार और रिश्तेदारों की सेवाटहल के ही योग्य समझा जाता है– ''हमारे समाज में जितनी भी समस्याएँ हैं, सब प्रायः सामाजिक क्षेत्र से ही पनपती हैं और वे कहीं न कहीं स्त्री से जुड़ी हुई भी होती हैं। प्राचीन काल की सामन्ती व्यवस्था में कच्ची उम्र में ही बच्चियों के मन में यह बात भर दी जाती थी कि पति परमेश्वर होता है। हृदय से सम्पूर्ण भक्ति उसे अर्पित करनी चाहिए, भले ही पति लम्पट, मूर्ख, धोखेबाज़ ही क्यों न हो। तब से परमेश्वर की उपाधि प्राप्त पुरुषवर्ग स्त्रियों पर शोषण करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानता आ रहा है। समाज में स्त्री की दयनीय स्थिति का कारण एक तो उसका स्त्री होना है दूसरा इस तरह के संकीर्ण आचारों को उस पर लादना है। वैसे मध्यवर्ग की स्त्रियों के सामने ही सबसे अधिक समस्याएँ होती हैं। हर तरह के नियम कानून उन्हीं पर थोपे जाते हैं।''[4]

स्त्री के समर्पण को उसकी दुर्बलता माना जाता रहा है और निरंतर उसको वस्तु तुल्य मानकर उसका उपभोग किया गया। पुरुषों ने सदैव स्त्री को इस्तेमाल करके उन्हें तुच्छ मानकर उनका तिरस्कार किया है। उनके शोषण, संघर्ष और दुःखों का सिलसिला अंतहीन है। यह सब होने पर भी स्त्री अपने अस्तित्व और अपने 'मैं' को बचाए रखने हेतु संघर्षरत है। इस प्रयास में उनको आंशिक सफलता भी प्राप्त हुई है परंतु यह तो उसकी अंतहीन यात्रा का आरंभ मात्र है। समाज में अपने प्राप्य को पाने के लिए उसको अपनी लड़ाई को और तीखेपन से लड़ना होगा। कमल जीत की कविता में स्त्रियाँ इस संघर्ष के लिए पूर्णतया तैयार दिखती हैं–

''अनवरत यात्रा करती
एक युद्ध लड़ती है
इरेज़र से डरती
पर ब्लेड से प्रेम करती है
औरत''5

कमल जीत चौधरी ने अपनी कविता में कठिन दौर से गुज़रती हुई और निरंतर त्रासद जीवन जीने के विवश स्त्री की करुण कथा कहने का प्रयास किया है। कवि ने समाज को एक तमाशबीन की संज्ञा देते हुए माना है कि स्त्रियों के कठिन संघर्ष में वह उनका साथ न देकर उनके लिए नित नई बाधाएँ उत्पन्न करने में संलग्न है। 'जो करना है अभी करो' कविता में कवि समाज को स्त्री की दुर्दशा के प्रति जागरुक कर उसके साथ सहयोग करने की अपील करते हुए कहता है–

''जो करना है

अभी करो

रस्सी पर चलती लड़की

नीचे गिर गई है।''[6]

समाज, परिवार एवं व्यक्तिगत जीवन की रस्सी रूपी संतुलन पर सधे कदमों से चल रही स्त्री को दिन–प्रतिदिन उसके अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। भारतीय समाज में तो स्त्री दुर्दशा की कथा अंतहीन है। विज्ञान ने वैसे तो मनुष्य की सुविधा हेतु अनेकानेक उपकरण उपलब्ध कराए हैं परंतु स्त्री अस्तित्व के लिए विज्ञान भी एक दुःस्वप्न से कम नहीं है। अल्ट्रासाउंड मशीनों के अविष्कार ने स्त्री के अस्तित्व पर ही संकट ला दिया है। अजन्मी कन्याओं की कोख में हत्या का जो सिलसिला दशकों से जारी है उसकी भयावहता को 'सेक्स रेशो' की गहरी खाई से समझा जा सकता है।

पहले से ही गुलामों जैसा जीवन जीने को विवश स्त्रियों की रही–सही निजता और स्वतंत्रत पर निरंतर हो रहे आक्रमणों को उजागर करते हुए कमलजीत 'जो करना है अभी करो' कविता में कहते हैं–

''दुनिया बहुत छोटी हो जाएगी

बहुत छोटी दुनिया में

प्यार करती लड़की के

खत पकड़े जाएंगे

जो करना है

अभी करो।''[7]

स्त्री–पुरुष समानता के संबंध में महादेवी वर्मा के विचार में समाज के विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि स्त्री–पुरुष के कर्त्तव्यों में सामंजस्य हो–

''केवल स्त्री के दृष्टिकोण से ही नहीं, वरन् हमारे सामूहिक विकास के लिए भी यह आवश्यक होता जा रहा है कि स्त्री घर की सीमा के बाहर भी अपना विशेष कार्यक्षेत्र चुनने को स्वतंत्र हो। गृह की स्थिति भी तभी तक निश्चित है जब तक हम गृहिणी की स्थिति को ठीक–ठाक समझकर उससे सहानुभूति रख सकते हैं और समाज का वातावरण भी तभी तक सामंजस्यपूर्ण है, जब तक स्त्री तथा पुरुष के कर्तव्यों में सामंजस्य है।''[8]

कमलजीत चौधी 'बिना दरबाजे वाले घर से चाँद' कविता के माध्यम से स्त्री–मुक्ति की आकांक्षाा को वाणी देते हैं। कविता की नायिका एक ऐसे संसार की कल्पना करती है जहां जीवन वर्णवाद, वर्गवाद, धर्म–संप्रदाय, जाति–पाति जैसे खाँचों–साँचों में बंटा हुआ न होकर समग्रता और पूर्णता के साथ उपस्थित हो। कवि ने प्रेमिका के माध्यम से एक सरल और सहज समाज की कल्पना की है, जहाँ लड़कियों को अपने 'मैं' को पहचानने के लिए आईने की आवश्यकता नहीं हो बल्कि वह सहज रूप से अपने अस्तित्व और अस्मिता से परिचय प्राप्त कर सकें। कविता में स्त्री के 'माँ' के रूप में त्याग का चित्रण किया गया है। माँ के रूप में स्त्री सदैव स्वयं को, अपने सपनों को भुलाकर पति, बच्चों और परिवार के सुख और प्रगति के लिए स्वयं होम होती रही है। 'लद्दाख–4' कविता में लद्दाखी बच्चे को अपनी माँ की गोद में बैठकर दुग्धपान करते देखकर कवि को मैदानों में लहलहाते खेतों की याद आ जाती है। कवि पहाड़ों को अपनी साँसों से अधिक प्रेम करने लगता है। वह पहाड़ों को जीवनदायी मानता है जिनसे उसके खेतों को पानी रूपी जीवन मिलता है। कवि ने इस कविता में बेहद सुंदर प्रतीकों का चयन किया है। संपूर्ण कविता प्रतीकों के माध्यम से स्त्री के मातृत्व रूप की महिमा को दर्शाती है। 'मेरे खेतों का पानी' कवि का अपना व्यक्तित्व है, 'पहाड़ की ऊँची गोलाइयाँ' माँ का प्रतीक है। 'साँस' कवि का ही नहीं अपितु संपूर्ण पुरुष जाति के व्यक्तित्व और जीवन का प्रतीक है। 'बर्फ' माँ के रूप में स्त्री की ममता का प्रतीक है जो बर्फ के समान अपने अस्तित्व को पिघलाकर संपूर्ण मनुष्य रूपी फसल को जिलाने का कार्य करती है। प्रस्तुत कविता में स्त्री को मानवता की सृष्टा और पालनकर्त्ता के रूप में दर्शाया गया है–

''नोनू

मेरी एक लधाखी अचिले की गोद में

पर्वतारोही सा संघर्ष करता

बहुत सुंदर दीखता

दुग्धपान कर रहा है

एकाएक मुझे कौंधता है कि

मेरे खेतों का पानी

पहाड़ की ऊँची गोलाईयों की देन है

अब मैं सांस से ज्यादा

बर्फ को प्रेम कर रहा हूँ।''9

बाज़ारवाद और घोर भौतिकवाद की अँधियारी गिरफ़्त में जकड़े मानव समूह के बीचों बीच स्त्री अपने सहज स्नेहिल स्वभाव से लौ की भाँति जगमगा रही है। कवि ने 'एक ऐसे समय में' कविता में स्त्री के माध्यम से यही बताने का प्रयास किया है कि बाज़ार ने शयनकक्ष तक में प्रवेश कर लिया है। वर्तमान भौतिकवादी दौर में रिश्ते–नाते स्वार्थ पर टिके हैं। पढ़ाई–लिखाई का अभिप्राय मात्र मोटे पैकेज हासिल करना भर रह गया है। पवित्र और कोमल भावनाएँ खोखले दिखावे में बदल गई हैं। ऐसे कठिन दौर में कवि ने स्त्री को उम्मीद की किरण भाँति दर्शाया है। कवि का मानना है कि वर्तमान समय में क्षणवादी प्रवृत्ति के प्रतिरोध में खड़ी स्त्री ही संसार के लिए आशा का संचार कर सकती है। वह अपने सहज–स्नेहिल स्वभाव से मानवीय मूल्यों की रक्षा करती दिखाई पड़ती है–

''एक ऐसे समय में

एक ही समय में

तुम सुन लेती हो मुझे पूरा अ से ज्ञ तक

जब बात तो छोड़ो

एक्सक्लूसिव खबर सुनते भी

लोग चैनल बदल देते हैं।''[10]

'रोको इन्हें रोको' कविता के माध्यम से कवि यह बताने की चेष्टा करता है कि समाज में तमाम तरह की नैतिकताएँ और वर्जनाएँ स्त्रियों पर ही थोपी जाती रही हैं। उनके शोषण के लिए भी उन्हीं को दोषी ठहराया जाता है। कभी कपड़ों के नाम पर तो कभी घर से बाहर निकलने की 'टाइमिंग' को लेकर स्त्रियों को प्रश्नों के कटघरे में खड़ा किया जाता रहा है और पुरुषों के सौ गुनाह माफ कर दिए जाते हैं। इस प्रवृत्ति को बदलने की आवश्यकता पर कवि स्त्रियों को आगाह करता है कि अपने बेटों, भाईयों को स्त्रियों के प्रतिसम्मान करने का भाव सिखाएँ–

''दिन जिनके मुँह पर थूक रहे हैं

समूह बनाने की कुव्वत नहीं उनमें

वे रात को झुण्ड बना लेते हैं

रोको इन्हें रोको

देर रात बाहर रह जाने से

इन्हीं के दाँत खाते हैं

मेरी माँ बहन दोस्त को रात नहीं खा सकती।''[11]

स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार और शोषण के लिए कवि पुरुषों को ही जिम्मेदार मानता है। कवि का मानना है कि स्त्री के लिए पुरुष ही सबसे बड़ा संकट है। 'साहित्यिक दोस्त' कविता में कमल जीत ने पुरुषों की उस मानसिकता पर प्रहार किया है जिसमें स्त्री को मोम की गुड़िया से अधिक कुछ नहीं समझा जाता है। पुरुष सदैव स्त्रियों को मूक खिलौने की भाँति इस्तेमाल करते रहे हैं। स्त्रियों की इच्छा, स्वतंत्रता, अस्मिता को पुरुष सदियों से कुचलते आए हैं–

''वे शीशे के घरों में रहते हैं

पत्थरों से डरते हैं

काँच की लड़ियों से प्रेम करते हैं।''[12]

समग्रतः कहा जा सकता है कि कमलजीत चौधरी ने अपनी कविताओं में स्त्री के संघर्ष और जिजिविषा को स्थान दिया है। उनकी कविता में स्त्रियाँ अपनी अस्मिता और पहचान के लिए प्रयासरत दिखाई पड़ती हैं। उनमें सामाजिक कुरीतियों से लोहा लेने की क्षमता है। वह घर–परिवार के भरण–पोषण की जिम्मेवारी का निर्वहन करते हुए पर्यावरण संबंधी सरोकारों पर भी मुखर दिखती हैं। अपने अधिकारों को हासिल करने के साथ–साथ वह रूढ़ियों, ग़ैर ज़रूरी परंपराओं, ढकोसलों और तथाकथित सामाजिक मर्यादाओं से बखूबी लोहा लेती दिखती हैं। कमलजीत की कविता की स्त्रियाँ खोखली मर्यादाओं का कॉलर पकड़ने का साहस रखती हैं।

संदर्भ :–

1. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 73
2. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 73
3. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, कमल प्रकाशन, 2010, पृ. 48
4. संपादक डॉ. वी.के. अब्दुल ज़लील, समकालीन हिन्दी उपन्यास : समय और संवेदना, वाणी प्रकाशन, 2003, पृ. 108
5. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 74
6. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 13
7. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 13–14
8. महादेवी वर्मा, शृंखला की कड़ियाँ, लोक भारती प्रकाशन, 1993, पृ. 62
9. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 106
10. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 45
11. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 89
12. कमलजीत चौधरी, हिंदी का नमक, दखल प्रकाशन, पृ. 12